International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 09-09-2023, Accepted: 09-10-2023, Published: 24-10-2023
Volume 9, Issue 5, 2023, Page No. 49-51

रहीम के काव्य में अभिव्यक्त नीति के विविध आयाम

ज्योति रानी
शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

सारांश
हिंदी साहित्य का मध्य–युग भक्ति आंदोलन का युग था। जिसमें नैतिक मूल्यों और सामाजिक सद्भाव पर जोर दिया गया। मध्यकाल में समाज में एक नई चेतना जागृत हुई। इस काल के लोग आँख–मूँदकर विश्वास करने के स्थान पर तार्किकता को महत्व देने लगे। इस दौर के कवियों ने शासकों और सामंती व्यवस्था पर सवाल उठाए और लोक जीवन व परमतत्व में अपनी आस्था व्यक्त की। यह काव्य समाज को सन्मार्ग की ओर ले जाने तथा लोक कल्याण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से रचा गया था। कबीर, रहीम, गिरधर कविराय जैसे कवियों ने दोहा, कुंडली और साखी जैसी शैलियों में नीतिपरक उपदेश दिये हैं। नैतिकता ही वह मापदंड है जिसके आधार पर मानव अपने कर्तव्यों का भली–प्रकार निर्वहन कर सकता है। नैतिकता का आश्रय ग्रहण करने पर ही मानव के भीतर उचित–अनुचित का विवेक जागृत होता है जिससे मानव के भीतर ईमानदारी, सत्यनिष्ठा, सहिष्णुता, समानता और सौहार्द की भावना विकसित होती हैं। आधुनिक युग भौतिकवादी युग है। भौतिकवादी वस्तुओं के अत्यधिक उपभोग ने मानव के आपसी रिश्तों और विवेक को अत्यंत प्रभावित किया है, बढ़ती सुख–सुविधाओं के परिणामस्वरुप मानव के भीतर नैतिक विचारों और कर्तव्यों का निरंतर अवमूल्यन होता जा रहा है जिससे वर्तमान समय में नीति काव्य की प्रासंगिकता और भी अधिक बढ़ गयी है।

मूल शब्दः हिंदी साहित्य, मध्य–युग, भक्ति आंदोलन, नैतिक मूल्य, सामाजिक सद्भाव, नई चेतना, तार्किकता, शासक, सामंती व्यवस्था ,लोक जीवन, परमतत्व, काव्य

भारतवर्ष प्राचीन काल से ही नीति को महत्त्व प्रदान करने वाला देश रहा है। भारत में नैतिक शिक्षा का इतना अमुल्य स्थान रहा है कि नीति ग्रन्थों को शास्त्र के सम्मत संज्ञा प्रदान कि गई है। 'शुक्रनीतिसार' के प्रथम अध्याय में सत्य ही लिखा है –

"नीतिशास्त्र सब मनुष्यों के लिए उपयोगी, मर्यादा विधायक, धर्म–अर्थ काम–मूल त्रिवर्ग हेतु भूत एवं मोक्षप्रद है।"

हिन्दी साहित्य का मध्य–युग नीति की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह साहित्य भक्ति तथा धर्म की दृष्टि से जितना समृद्ध है लगभग उतना ही नीति–काव्य की दृष्टि से भी सम्पन्न है। मध्ययुग की ऐसी कोई भी रचना नहीं होगी जिसमें किसी न किसी प्रकार की नीति से सम्बद्ध थोड़े बहुत छन्द कवि की लेखनी से न निकले हो। सामाजिकता, दार्शनिकता, धार्मिकता एवं नैतिकता का जैसा समन्वय मध्यकाल में दिखाई देता है वैसा कहीं ओर दिखायी नहीं देता।

चाणक्य सूत्र में नीति शब्द का प्रयोग राजनीति तथा सामान्य नीति दोनों अर्थों में हुआ है। जिन प्रमुख ग्रन्थों में नीति का उल्लेख मिलता है, उनमें प्रथम वाल्मीकि रामायण हैं–

सत्यमेकं पदं ब्रम्हा सत्ये धर्मः प्रतिष्ठित।
सत्यमेवाक्षया वेदाः सत्येनावाप्यते परम।।[1]

इसके अनुसार उन्होंने सत्य को एक ब्रह्मास्वरुप माना हैं, सत्य में ही वर्तमान एवं भविष्य की परिणति होती है। सत्य से ही ब्रह्मरुप का परम पद प्राप्त होता है। नीति यही कहती है कि धर्म आस्थावान है एवं सत्य का पालन करना उचित व आवश्यक है। जिस प्रकार मनुष्य को इस नश्वर संसार में जीवित रहने के लिए हवा, पानी और भोजन की आवश्यकता होती है ठीक उसी प्रकार मर्यादित और संयमित जीवन यापन करने के लिए लोक व्यवहार और नीति की आवश्यकता होती है। नीति शब्द का व्युतपत्ति मूलक अर्थ है – "आगे ले जाना "[2]

डॉ. भोलानाथ तिवारी नीति के विषय में कहते हैं –

"समाज को संतुलित पथ पर अग्रसर करने एवं व्यक्ति को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की उचित रीति से प्राप्ति कराने के लिए जिन विधि या निषेधमूलक वैयक्तिक और सामाजिक नियमों का विधान देश, काल और परिस्थिति के संदर्भ में किया जाता हैं उन्हे नीति शब्द से अभिहित करते हैं।"[3]

किसी भी समाज की प्रगति के लिए मानव जीवन में नैतिक शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। नैतिकता का आश्रय ग्रहण करने पर ही मनुष्य की जीवनचर्या का संचालन होता है। सम्पूर्ण मानव जाति नीति का आलम्बन लेकर ही प्रगति कर रही है और भविष्य में भी करती रहेगी। नीति विहीन समाज की कल्पना करना भी संभव नहीं है। प्रत्येक मनुष्य नीति के मार्ग का अनुसरण करते हुए एक आदर्श एवं सभ्यतापूर्ण जीवन व्यतीत कर सकता है।

डॉ. बालकृष्ण अकिंचन नीति को परिभाषित करते हुए कहते हैं –

"हम भी नीति को ऐसा ही मार्ग या कला समझते है जिस पर चलकर दैनिक जीवन में आदर्श सफलता प्राप्त की जा सकती है। आदर्श सफलता से तात्पर्य उस सफलता से है जो कौशल,चरित्र,अनुभव,योग्यता अथवा दूरदर्शिता के बल पर किसी समाज अथवा व्यक्ति को हानि पहुँचाए बिना प्राप्त की गई हो"[4]

नीति शब्द से हम भली भाँति परिचित है जैसे – चाणक्य नीति, विदुर नीति और राजनीति इत्यादि। संस्कृत आचार्यों ने भी नीति के संबंध में भिन्न–भिन्न मत प्रस्तुत किये हैं। प्रसिद्ध काव्यशास्त्री मम्मट ने काव्य का संबंध नीति के साथ स्थापित किया हैं –

काव्यं यशसेअर्थकृते व्यवहारविदेशिवेतरक्षतये।
सघः परननिर्वृतये कान्ता संमतियोपदेश युजे।।[5]

हिंदी के राष्ट्रकवि के रूप में विख्यात मैथिलीशरण गुप्त ने भी काव्य में नीति को आवश्यक माना हैं। जिस प्रकार नीति विहीन समाज की कल्पना संभव नहीं है ठीक उसी प्रकार नीति विहीन काव्य भी समाज के लिए उपयोगी नहीं है इस संबंध में मैथिलीशरण गुप्त ने कहा हैं –

केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए,
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए।

नीति और लोक व्यवहार की उपयोगिता का ज्ञान केवल भारतीय मनीषियों तक ही सीमित नहीं रहा अपितु कुछ पाश्चात्य विद्वानों ने भी काव्य मे नीति को अनिवार्य माना है। प्लेटों ने नीति विहीन काव्य की निंदा की है और मैथ्यू आर्नोल्ड ने भी काव्य में नीति का होना परम आवश्यक माना है। सुप्रसिद्ध कथाकार टालस्टाय भी नीति युक्त कला के प्रबल समर्थक थे। हिंदी साहित्य के पूर्व मध्यकाल संवत् 1050 से 1375 को भक्तिकाल की संज्ञा से अभिहित किया गया है। इसी भक्तिकालीन नीतिकाव्यधारा के अनन्य कवि रहीम है। रहीम का पूरा नाम अब्दुल रहीम खानखाना था। वे अपनी सरलता और भावप्रणवता के कारण मुनष्य के हदय में अपना एक विशेष स्थान रखते है। हिंदी साहित्य जगत में नीतिकार के रूप में रहीम को पर्याप्त कीर्ति प्राप्त हुई ये सम्राट अकबर के नवरत्नों में से एक थे।

"ये संस्कृत, अरबी तथा फारसी भाषा के विद्वान और हिंदी के पूर्ण मर्मज्ञ कवि थे। रहीम की सभा विद्वानों और कवियों से सदा भरी रहती थी। अकबर के समय में ये सेनानायक और मंत्री थे और इन्हें अनेक युद्धों में भी भेजा गया था। वीर होने के साथ–साथ रहीम गरीबों के दाता भी थे। रहीम ने किसी याचक को खाली हाथ वापस नहीं लौटाया। वे अपनी हैसियत के अनुरूप दान करते थे।"[6]

नीति काव्य की दृष्टि से दोहावली रहीम की प्रमुख रचना है जिसके अन्तर्गत रहीम के जीवन अनुभव से प्राप्त हुए नीति कथन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। रहीम का प्रत्येक दोहा क्रियात्मक जीवन एवं व्यवाहारिक ज्ञान के आधार पर टिका हुआ है। रहीम थोथे आदर्श के घोर विरोधी थे । उन्होंने अपने कटु अनुभव एवं सरस अभिव्यक्ति के आधार पर जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए जनता को जो मूलमंत्र बताये है वह आज भी जन–जन के गले का कण्ठहार बने हुए है। इनकी जन्मजात प्रतिभा, स्वाभाविकता, सरसता और शास्त्रीय ज्ञान के आधार पर रहीम के नीति काव्य को सोने में सुगंध भरने के समान माना जा सकता है। रहीम को सर्वाधिक ख्याति नीति काव्य के प्रणेता के रूप में मिली है। उनका काव्य नीति के काव्य भवन का निर्माण करता है। वे प्रतिभाशाली कवि थे, उन्होंने अपने नीति काव्य में सामान्य जन–जीवन का चित्रण किया है, वे चाहते तो स्तुति परक या प्रशंसा परक काव्य लिखकर प्रसिद्धि प्राप्त कर सकते थें परन्तु वे जन–जीवन के कवि थे उन्होंने जनता के हित के लिए जन–सामान्य की भाषा में कविता लिखी।

भारतीय समाज में अंधानुकरण की प्रवृत्ति रही है। शिष्ट से शिष्ट और सभ्य से सभ्य कहें जाने वाले समाज में भी यह प्रवृत्ति पाई जाती हैं जिसके परिणाम स्वरूप मनुष्य उचित और अनुचित का भेद करने में सक्षम नहीं हो पाता है। रहीम ने परम्परागत गुरुभक्ति का अंधानुकरण न करने का उदघोष किया है। उन्होंने कहा हैं कि हमें अपने गुरूओं की भी उचित आज्ञाओं का ही पालन करना चाहिए। इसके संदर्भ में उन्होंने रामायण की एक घटना को उद्धृत किया है कि जब गुरु वशिष्ठ ने भरत को अयोध्या का राज–पाठ संभालने का आदेश दिया तब भरत ने राम की अनुपस्थिति में राज्य को स्वीकार नहीं किया जिसके कारण गुरु वशिष्ठ की दृष्टि में भरत के लिए सम्मान में ओर अधिक वृद्धि हो गयी

अनुचित वचन न मानिए, जदपि गुरायसु गाढ़ि।
है रहीम रघुनाथ ते, सुजस भरत को बाढ़ि।।[7]

हमारे सामाजिक जीवन में परिचय, मित्रता और घनिष्ठता का महत्तवपूर्ण स्थान है। ये तीनों मनुष्य की सामाजिक प्रतिष्ठा को स्थापित करने के लिए उत्तरदायी है परन्तु प्रेम का स्थान सर्वोपरि है। वह किसी एक व्यक्ति के प्रति उत्पन्न होने वाली कोमल भावनाओं का प्रतिफल है। प्रेम का सम्बन्ध मनुष्य की भावनात्मक एवं आन्तरिक अनुभुतियों से है। प्रेम जैसी सुकोमल भावना में छल–कपट जैसी कठोर भावनाओं का कोई स्थान नहीं है। रहीम ने प्रेमी जनों की यात्रा में विश्वास को महत्त्व देते हुए कहा है –

रहीमन धागा प्रेम का, मत तोरहु चटकाय।
टूटे से फिर ना मिले, मिले गाठँ पड़ जाय।।[8]

प्रेम हृदय का व्यापार है इसमें हृदय के द्वारा हृदय का सौदा होता है इस व्यापार में झूठ और दिखावे के लिए कोई स्थान नहीं हैं। प्रेम में विश्वास रुपी धागा यदि एक बार टूट जाए तो दोबारा नहीं जोड़ा जा सकता और यदि जोड़ भी दिया जाए तो फिर पहले वाली बात नहीं रहती अपितु हृदय में दोबारा उसी विश्वास को स्थापित करना संभव नहीं होता है।

मनुष्य के जीवन में संगति का विशेष महत्त्व है। सुसंगति मानव के व्यक्तित्व निर्माण में एक महत्ती भूमिका अदा करती है। मनुष्य जैसी संगति का अनुसरण करता है वैसा ही प्रभाव उसके जीवन पर स्पष्ट दिखाई देता है। ऐसी ही स्थिति कुसंगति की भी हैं कुसंगति में फसकर मानव अपने साथ–साथ अपने संपूर्ण परिवार, जाति तथा राष्ट्र तक का विनाश कर सकता है। सुवृत्तियों का प्रभाव भले ही मनुष्य पर पड़े या न पड़े परंतु कुवर्त्तियों का प्रभाव तुरंत पड़ता है। सज्जनों के साथ रहने से यश प्राप्त होने में विलम्ब हो सकता है किन्तु दुर्जन के साथ बसने से कलंक लगे बिना नहीं रह सकता है, दुर्जन सज्जनों की संगति खोजते है और फिर उन्हें अपने ही समान कुमार्ग की और प्रेरित करते है परन्तु एक संस्कारी व्यक्ति के जीवन को कुसंगति किसी भी प्रकार प्रभावित नहीं कर सकती है। रहीम कहते हैं कि जिस प्रकार सुगन्धित चन्दन के वृक्ष पर लिपटे रहने पर विषैले सर्प उस पर कोई प्रभाव नहीं ड़ाल पाते उसी प्रकार जो व्यक्ति अच्छे स्वभाव का होता है उस पर बुरी संगत का कोई प्रभाव नहीं होता हैं –

जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग।
चन्दन विष व्यापत नही, लिपटे रहत भुजंग।।[9]

समय की गति के प्रति सतर्क एवं सावधान रहने वाले जीव ही इस संसार में प्रसिद्धि प्राप्त करते हैं समय अत्यंत वेगवान हैं यदि समय एक बार बीत जाए तो फिर लाख प्रयत्न करने पर भी वह कभी वापस लौटकर नहीं आता हैं। धन, सम्पत्ति, वैभव जैसी बहुमुल्य वस्तुएँ तो पुनः प्राप्त की जा सकती है किन्तु बीते हुए समय का हाथ आना संभव नहीं है उचित समय पर उचित कार्य करना ही जीवन में सफलता का मूल मंत्र है –

समय–लाभ सम लाभ नहि, समय–चूक सम चूक।
चतुरन चित रहीम लगी, समय–चूक की हूक।।[10]

स्वाभिमान मनुष्य को अस्तित्व का बोध कराता है। स्वाभिान मानव को क्षुद्र जीवन के बन्धनों से मुक्त कर स्वतन्त्र जीवन जीने के

लिए प्रेरित करता है। विनम्रता के प्रतिमूर्ति महाकवि तुलसीदास भी अहंकार शून्य किन्तु स्वाभिमानी व्यक्ति थे। इसलिए वे संसार के लोगों द्वारा अपनी आलोचना सुनकर भी विचलित नहीं होते और कहते हैं –

धूत कहौ, अवधूत कहौ, रजपूत कहौ, जुलहा कहौ कोऊ।
काहू की बेटी सों बेटा न ब्याहिब, काहू की जाति बिगारि न सोऊ।।[11]

स्वाभिमान का अर्थ किसी दूसरे व्यक्ति का अपमान करना कदापि नहीं हैं। जिस व्यक्ति के भीतर स्वाभिमान की भावना होती हैं वह व्यक्ति किसी का अपमान करने से सदैव कतरायेगा । रहीम मानते है –

भलो भयो घर से छुट्यो, हास्यौ सीस परिखेत।
काके काके नवत हम, अपन पेट के हेत।।[12]

मनुष्य को किसी भी परिस्थिति में अपने स्वाभिमान का परित्याग नहीं करना चाहिए इसलिए वे उस सिर को धन्य समझते है जो किसी के सम्मुख झुकता नहीं भले ही युद्ध में कटकर गिर जाए। वह स्वाभिमान की प्रतिमूर्ति बनकर कहते है कि पेट के लिए किसी के आगे सिर झुकाने से अधिक अपमानजनक स्थिति दूसरी नहीं होती है। यही कारण है कि उन्होंने बड़े पेट की सदैव आलोचना की है क्योंकि उसे भरने के लिए मनुष्य को अत्यधिक कष्ट सहना पड़ता है। मनुष्य को अपनी आजीविका की व्यवस्था करने में ही सबसे अधिक स्वाभिमान का त्याग करना पड़ता है। इसलिए वे पेट की आलोचना करते हुए कहते हैं कि अगर पेट पीठ होता तो हमें अपना स्वाभिमान क्यो खोना पड़ता।
स्वार्थ मनुष्य के भीतर उत्पन्न होने वाली सबसे निकृष्टतम भावना है। स्वार्थी मनुष्य अपना हित साधने के लिए अन्य व्यक्ति की भावना को आहत करने से भी नहीं कतराता है। स्वार्थ सिद्धि का रोग ऐसा रोग है जिसे यह एक बार लग जाता है उसे पूर्णरूपेण अन्धा कर देता है। स्वार्थी मनुष्य किसी भी व्यक्ति का बड़े से बड़ा उपकार भुला देते है। स्वार्थ सिद्धि की भावना न केवल तत्कालीन समाज की समस्या थी अपितु वर्तमान समय में भी स्वार्थ सिद्धि की भावना निरन्तर बढ़ती जा रही है तथा मानव के मन से प्रेम व आपसी सौहार्द की भावना निरन्तर कम होती जा रही है। स्वार्थ सिद्ध हो जाने पर उपकारी व्यक्ति को दूध की मक्खी की भाँति निकाल कर फेंक दिया जाता है। स्वार्थ सिद्धि के संबंध में रहीम कहते हैं जब तक भाँवरे नहीं पड़ती, मौड़ को दुल्हे के सिर पर स्थान मिलता है। भाँवरे पड़ते ही उसे नदी में प्रवाहित कर दिया जाता है।

काज परे कछु और है, काज सरे कछु और।
रहिमन भाँवर के भये, नदी सिरावत मौर।।[13]

भाग्य की महिमा बड़ी ही प्रबल है वह मानव के साथ जैसा चाहे वैसा खेल खेलता रहता है। लोक अनुभव सिखाता है कि यहाँ कुछ भी मानव के अपने हाथ में नहीं है कोई परोक्ष शक्ति हमारी इच्छा के विरुद्ध बहुत से कार्य करा ले जाती है इसका ही दूसरा नाम भाग्य है। मनुष्य कोई भी कर्म करने से पूर्व हजार बार सोच विचार करता है परंतु फिर भी फल मन के अनुकूल प्राप्त नहीं होता है। भाग्य के समक्ष एक सामान्य व्यक्ति तो क्या ही कर सकता है जब शक्ति–सम्पन्न नृप–देवादि भी भाग्य के हाथ का खिलौना बनते रहे है। किसी–किसी मनुष्य के भाग्य की महिमा इतनी प्रबल होती है कि वह साधारण परिश्रम में भी विशेष उपलब्धि प्राप्त कर लेते है। भाग्य की महिमा के संबंध में रहीम कहते हैं–

ज्यों नाचत कठपूतरी, करम नचावत गात।
अपने हाथ रहीम ज्यों, नहीं आपुने हाथ।।[14]

जिस प्रकार कठपुतलियाँ अपने मन से नहीं नाच पाती उन्हें इशारों से कोई और नचाता है, ठीक उसी प्रकार मनुष्य भी अपने कर्मों के अधीन हैं, मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन कर्मों के अनुसार व्यतीत होता है।

अतः निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि रहीम का नीति–काव्य विषय निरुपण की दृष्टि से पर्याप्त समृद्ध है। उन्होने दान–मान संगति–कुसंगति, सज्जनता, दुर्जनता, न्याय–अन्याय आदि विषयों को अपने काव्य का विषय बनाया उन्होंने साहित्य को घोर धार्मिकता एवं शास्त्रीयता के वातावरण से मुक्त करके, क्रियात्मक एवं व्यवहारिक जीवन के आधार पर व्यक्त किया। इनके नीति परक दोहे आधुनिक युग में ओर भी अधिक प्रासांगिक है। वर्तमान युगीन मानव जहाँ भौतिकवादी वस्तुओं के अधीन होता जा रहा है वही दूसरी ओर आधुनिक मानव के भीतर लोक व्यवहार और नैतिकता का अभाव होता जा रहा है जिसके फलस्वरुप समाज में विसंगतियाँ बढ़ती जा रही है। रहीम के दोहे मानव के अन्तर्मन में नवीन ऊर्जा का संचार करते है जिससे मानव के भीतर समाज, संस्कृति और लोक–व्यवहार को समझने की एक गहरी समझ विकसित होती है। रहीम के दोहे हिंदी साहित्य के अमूल्य रत्न है। इस भारतभूमि पर शायद ही ऐसा कोई व्यक्ति होगा जिसने रहीम के दोहे न पढ़े हो।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. वाल्मीकि रामायण– अयोध्याकाण्ड, गीताप्रेस गोरखपुर सन् – 1997
2. नालन्दा अद्यतन कोश, सम्पादक पुरुषोत्तम नारायण अग्रवाल, पृ०– 451
3. हिंदी नीतिकाव्य, भोलानाथ तिवारी पृ०– 4
4. भारतीय नीतिकाव्य परम्परा और रहीम, डॉ. बालकृष्ण अकिंचन, पृ०– 5
5. काव्य प्रकाश– मम्मट, पृ०– 96, पुखराज प्रकाशन खतौली, सन् 1996
6. हिंदी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ०– 141
7. रहीम ग्रन्थावली, सम्पादक डॉ. देशराज सिंह भाटी, पृ०– 9
8. वहीं, पृ० – 20
9. वहीं, पृ०– 8
10. वहीं, पृ०– 25
11. कवितावली (उत्तरकाण्ड), तुलसीदास, छन्द संख्या– 206
12. रहीम ग्रन्थावली, सम्पादक डॉ. देशराज सिंह भाटी, पृ०– 12
13. वहीं, पृ०– 4
14. वहीं, पृ०– 9